जनसत्ता

शिक्षा की खातिर

राजधानी दिल्ली स्थित जेएनयू यानी जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में नए नियम-कायदों की घोषणा के विरोध में विद्यार्थियों के बीच उभरे विरोध और प्रदर्शन से विश्वविद्यालय और फिर दिल्ली पुलिस ने जिस तरह निपटने की कोशिश की, उसे एक तरह से उपेक्षा और दमन का उदाहरण कहा जा सकता है। हैरानी की बात यह है कि जेएनयू में उठे जिन सवालों पर विचार करने की जरूरत थी, उसके लिए प्रशासन ने एक ऐसी जिद ठान ली, जिसका नतीजा विद्यार्थियों के विरोध प्रदर्शन के रूप में सामने आया। जैसी खबरें सामने आईं, उसके मुताबिक यह समझना मुश्किल है कि लोकतांत्रिक तरीके से किए जा रहे विरोध प्रदर्शन से निपटने के लिए पुलिस को इस हद तक सख्ती क्यों बरतनी पड़ी, बिना भेदभाव के छात्र-छात्राओं पर लाठीचार्ज करने और कइयों को हिरासत में लेने की जरूरत क्यों पड़ी! हालांकि जब पुलिस के रवैये की तीखी आलोचना सामने आई तो कहा गया कि उसकी ओर से हिंसा नहीं की गई। लेकिन लाठीचार्ज में घायल छात्र-छात्राओं की जैसी तस्वीरें और अन्य वीडियो सामने आए हैं, उससे साफ है कि पुलिस ने बिना किसी बड़ी वजह के विद्यार्थियों के खिलाफ सख्त रुख अख्तियार किया।

इस समूचे प्रकरण में एक बड़ी समस्या यह देखी गई है कि जेएनयू में उभरे इस विरोध को परिसर से बाहर सिर्फ छात्रावास की दस रुपए महीने की फीस में बढ़ोतरी तक केंद्रित करके प्रचारित किया गया। कई लोगों को यह रकम बेहद मामूली लगी और विद्यार्थियों का विरोध अनुचित। जबकि सच यह है कि नई नियमावली में छात्रावास शुल्क के अलावा भी मेस सेक्युरिटी, बिजली-पानी जैसी कई मदों में काफी ज्यादा बढ़ोतरी की गई है और उसे वहां पढ़ाई और शोध कर रहे बहुत सारे विद्यार्थियों की पहुंच से बाहर होने के तौर पर देखा गया है। विद्यार्थियों की एक बड़ी आपत्ति यह भी थी कि छात्रावास के समय और भोजन के हॉल में जाने के लिए जो शर्तें बताई गई हैं, वे उनके अध्ययन और परिसर में सहज जीवनशैली पर चोट है। दरअसल, जेएनयू का पुस्तकालय चौबीसों घंटे खुला रहता आया है और वहां अध्ययन और शोध करने वाले विद्यार्थी अपनी सुविधा और जरूरत के मुताबिक जाकर पढ़ाई करते हैं। लेकिन अगर छात्रावास में रात साढ़े ग्यारह बजे तक हर हाल में लौट आने का नियम लागू हो जाता तो रात में पुस्तकालय की पढ़ाई बंद हो जाती। फिर डाइनिंग हॉल में जिस तरह 'उचित कपड़े' पहन कर आने की शर्त बताई गई थी, उसे एक तरह से 'मोरल पुलिसिंग' की तरह देखा गया। यह वजह है कि इसे टाल दिया गया।

पिछले कुछ समय से जेएनयू के बारे में जिस तरह की बातें चर्चा में आईं, उसमें कई महत्त्वपूर्ण सवाल गौण हो गए। कायदे से शिक्षा पर आने वाला खर्च सिर्फ इतना ही होना चाहिए कि वह समाज के सबसे कमजोर तबके तक की भी पहुंच में हो। जेएनयू सहित सरकार की ओर से संचालित शिक्षण संस्थानों में पढ़ाई से लेकर छात्रावास और दूसरी सुविधाओं तक का खर्च इसी मकसद से इतना रखा गया है कि वहां किसी भी सामाजिक वर्ग से आने वाले विद्यार्थी की पढ़ाई में आर्थिक प्रश्न बाधा नहीं बने। जहां तक आम जनता से वसूले गए टैक्स के दुरुपयोग का सवाल है तो इस संदर्भ से देश भर में सांसदों-विधायकों के वेतन-भत्तों से लेकर निजी कंपनियों के टैक्स या कर्ज में रियायत और माफी को लेकर कई मुद्दे उठते रहे हैं। बहरहाल, देश में लोकतंत्र की मजबूत बुनियाद को देखते हुए तकाजा यही है कि सरकार शिक्षा पर आने वाले खर्च को सबकी पहुंच में बनाए। साथ ही, किसी लोकतांत्रिक विरोध प्रदर्शन से पेश आने का तौर-तरीका ऐसा होना चाहिए, ताकि लोकतंत्र की जड़ें मजबूत हों।

बेवजह विवाद

कालापानी क्षेत्र पर विवाद खड़ा करते हुए भारत के सदियों पुराने पड़ोसी नेपाल ने जिस तरह से आंखें तरेरी हैं, उसकी शायद ही किसी ने कल्पना की होगी। नेपाल के प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली ने तल्ख तेवर में भारत को धमकाते हुए कह दिया कि नेपाल उसे अपनी एक भी इंच जमीन पर कब्जा नहीं करने देगा। कालापानी क्षेत्र को लेकर जो विवाद उठा है, उस बारे में दोनों देशों में लोग शायद जानते भी नहीं होंगे। हालांकि ऐसे छोटे-मोटे कुछ किलोमीटर के इलाके देशों की सीमाओं के आसपास होते हैं जो भौगोलिक और सामरिक दृष्टि से किसी भी देश के लिए महत्त्वपूर्ण होते हैं और इनकी वास्तविक स्थिति को लेकर विवाद की स्थिति बनी रहती है और वक्त पड़ने पर इनका राजनीतिक हितों के लिए इस्तेमाल किया जाता है। कालापानी का विवाद उठा कर नेपाल यही कर रहा है। तथ्य यह है कि कालापानी भारत का क्षेत्र है, वहां अरसे से भारतीय सुरक्षा बल तैनात हैं। हाल में नेपाल इसलिए भड़का है कि भारत ने इकतीस अक्तूबर को जम्मू-कश्मीर और लद्दाख को नया केंद्र शासित प्रदेश बनाने के साथ ही देश का नया नक्शा जारी किया, जिसमें कालापानी को भारतीय क्षेत्र में दिखाया गया है।

नेपाल की इस तरह की धमकी दोनों देशों के बीच रिश्तों में आ रहे बदलाव का बड़ा संकेत है। ओली ने जिस अंदाज में और जिन शब्दों का इस्तेमाल करते हुए भारत को चेताया है, उससे उन्होंने यह संदेश देने की कोशिश की है कि भारत ने कालापानी क्षेत्र पर कब्जा कर रखा है। जबकि तथ्य बताते हैं कि पैंतीस वर्ग किलोमीटर का यह त्रिकोणीय इलाका उत्तराखंड के पिथौरागढ़ में आता है और इसकी सीमाएं चीन और नेपाल से सटी हैं। यह इलाका पिछले दो सौ साल से भी ज्यादा समय से भारत के अधिकार क्षेत्र में है। सन 1816 में गोरखाओं और अंग्रेजों के बीच हुई संधि में इसे भारत को सौंप दिया गया था। 1962 में भारत-चीन युद्ध के बाद से ही कालापानी में भारत-तिब्बत सीमा पुलिस और सशस्त्र सीमा बल की चौकियां हैं। नेपाल के किसी भी पूर्व शासक ने इसे कभी विवाद का मुद्दा नहीं बनाया। ऐसे में कालापानी कैसे नेपाल का हिस्सा हो गया, ओली के पास इसके कोई अकाट्य तर्क नहीं हैं।

कालापानी विवाद मूल रूप से नेपाल की वामपंथी सत्ता की उपज है, यह किसी से छिपा नहीं है। 1998 में नेपाल माओवादी मार्क्सवादी लेनिनवादी के समर्थकों ने इस क्षेत्र पर अवैध कब्जा करने की कोशिश की थी। कालापानी को लेकर नेपाल ने जिस तरह की आक्रामक कूटनीति दिखाई है, उससे यही लगता है कि इसके पीछे चीन का हाथ है। वरना नेपाल इस तरह से आंखें दिखाने की हिम्मत नहीं करता। यों भी सत्ता में आने के बाद से ही ओली भारत विरोधी रुख के लिए जाने जाते हैं। चीन के प्रति उनका प्रेम जगजाहिर है। चीन भले भारत से मधुर रिश्तों का दावा करता हो, लेकिन उसकी हर चाल भारत को घेरने की होती है। इससे पहले डोकलाम विवाद खड़ा करके चीन ने भूटान पर भारत से दूरी बनाने का दबाव बनाया था, लेकिन भूटान ने समझदारी दिखाई और सदियों पुराने रिश्तों को देखते हुए भारत के साथ खड़ा रहा। उस नाकामी के बाद चीन ने अब नेपाल पर डोरे डाले हैं और कालापानी को विवाद का मुद्दा बनाने की रणनीति बनाई है। भारत हमेशा से हर मामले में नेपाल का साथ देता आया है, यह नेपाल की सत्ता को नहीं भूलना चाहिए। दूसरों के इशारे पर इस तरह के विवाद सिर्फ अशांति को ही जन्म देंगे।

कल्पमेधा

जो युद्ध-क्षेत्र से भाग जाता है, वह दूसरे दिन लड़ने को जीवित रह सकता है। लेकिन जो खुद को युद्ध की भेंट चढ़ा देता है, वह कभी दोबारा नहीं उठ सकता है।

- गोल्डस्मिथ

श्रीलंका में नई चुनौतियां

ब्रह्मदीप अलूने

राजपक्षे बंधुओं की चीन के अनुकूल नीति के साथ ही पड़ोसी देश में परंपरावाद का हावी होना इस पूरे उप महाद्वीप के लिए बड़ा संकट बन सकता है। आधुनिक प्रगतिशील युग में कई देशों में धुर दक्षिणपंथी राजनेता अपनी विभाजनकारी नीतियों के बल पर बेहद लोकप्रिय हो रहे हैं और उनके दल सत्ता पर काबिज भी हो रहे हैं। ऐसे में सबसे बड़ा संकट अल्पसंख्यक धार्मिक, नस्लीय और जातीय समूहों के सामने उठ खड़ा हुआ है।

लोकतंत्र में शक्ति की राजनीति या बल की राजनीति के सहारे भी सत्ता के शिखर को हासिल किया जा सकता है। यूरोप की सामंतवादी ताकतों की इन नीतियों के प्रभाव में अब विकासशील और पिछड़े राष्ट्र भी शुमार हो गए हैं। दरअसल भारत के दक्षिण में स्थित श्रीलंका की आंतरिक राजनीति में तेजी से जो बदलाव आ रहे हैं, उससे यह साफ हो जाता है कि समाज के एक विशेष और छोटे तबके पर लौह और रक्त की नीति का प्रयोग करने से बहुसंख्यक समाज खुश हो सकता है और यह लोकतांत्रिक सत्ता की सर्वोच्च सीढ़ियां चढ़ने का एक सशक्त माध्यम भी बन सकता है।

इस समय श्रीलंका में गोटबाया राजपक्षे राष्ट्रपति चुनाव में जीत हासिल कर श्रीलंका के नए नायक बन गए हैं। उनका संबंध परंपरावादी दल श्रीलंका पोदुजन पेरामुना से है जो आमतौर पर बहुसंख्यक सिंहलियों के हितों के प्रति उदार और अन्य अल्पसंख्यक समूहों के लिए अपेक्षाकृत कठोर माना जाता है। गोटबाया राजपक्षे देश के पूर्व राष्ट्रपति महिंदा राजपक्षे के भाई होने के साथ ही देश के रक्षा मंत्री भी रहे हैं। श्रीलंका से तमिल पृथकतावादी संगठन एलटीटीई (लिबरेशन टाइगर ऑफ तमिल ईलम) के खात्मे का श्रेय गोटबाया को ही जाता है। इसीलिए इन चुनावों में वे देश की बाहुल्य सिंहली जनता की एकमात्र पसंद बन कर उभरे।

श्रीलंका का उत्तरी भाग भारत के दक्षिण पूर्वी समुद्र तट से मात्र कुछ ही किलोमीटर दूर है। जाहिर है, श्रीलंका और भारत में सांस्कृतिक समानताएं तो हैं ही, लेकिन साथ ही भारत के लिए इस देश का खास सामरिक महत्त्व भी है। श्रीलंका की भारत को लेकर शुरू से आशंकाएं रही हैं जिसके मूल में इस देश में तमिलों की संख्या और भारत की मजबूत सामरिक शक्ति है। इस समय भारत श्रीलंका सामरिक संबंधों की बात करें, तो श्रीलंका भारत के धुर विरोधी चीन से सबसे ज्यादा हथियार खरीदता है और पाकिस्तान के साथ उसका नाभिकीय सहयोग जारी है।

गोटबाया राजपक्षे पिछले कुछ समय में सिंहलियों के सर्वमान्य नेता के रूप में भी उभरे हैं। गोटबाया अपने भाई के समान ही सिंहली राष्ट्रवाद के प्रतीक बन गए हैं। चीन के प्रति उनकी उदार नीतियां और पाकिस्तान से गरमाहट पूर्ण संबंध चर्चा में हैं। इसलिए भारत की दृष्टि से भी इस राजनीतिक घटनाक्रम का महत्त्व बढ़ जाता है। इन सबके बीच इस तथ्य को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता कि राजपक्षे के पूर्व भी श्रीलंका का राजनीतिक इतिहास भारत विरोध के आसपास ही रहा है। भारत की आजादी के कुछ महीनों बाद ही नवंबर,1947 में श्रीलंका ने ब्रिटेन के साथ रक्षा संधि कर ली थी। इस पर श्रीलंका के एक समय प्रधानमंत्री रहे और शिखर नेता कोटलेवाला ने स्पष्ट कहा था कि यदि श्रीलंकाई प्रायद्वीप से ब्रिटिश अड्डा हट जाएगा तो भारत इस प्रायद्वीप को हथिया लेगा। आगे चल कर भी श्रीलंका की कई सरकारों ने भारत विरोधी नीति पर चलकर चीन को अपना प्रमुख सामरिक साझीदार बनाया और साथ ही पाकिस्तान से नाभिकीय और सैन्य संबंध भी मजबूत किए। भारत-चीन के 1962 के युद्ध में भी श्रीलंका की नीति चीन के पक्ष में झुकी नजर आई। 1971 में भारत पाकिस्तान युद्ध के दौरान पाकिस्तान के विमानों के लिए श्रीलंका ने अपना हवाई क्षेत्र खोल कर भारत विरोधी नीति का परिचय दिया। इस सबके साथ कथित तौर पर भारत के मूल निवासी माने जाने वाले तमिलों के दमन की उसकी नीति दोनों देशों के संबंधों के लिए चुनौतीपूर्ण रही है।

श्रीलंका की आबादी बीस करोड़ से ज्यादा है, जिसमें दस फीसद मुसलमान और बारह फीसद हिंदू हैं, जिनमें ज्यादातर तमिल अल्पसंख्यक हैं और सात फीसद लोग ईसाई धर्म को मानने वाले हैं। श्रीलंका के जाफना, बट्टीकलोआ और त्रिंकोमाली क्षेत्र में करीब बीस लाख तमिल रहते हैं जिनका संबंध दक्षिण भारत से है। श्रीलंका और भारत के दक्षिण में यह मान्यता है कि दक्षिण भारत के तमिलों ने सिंहलियों को पराजित किया था। तमिलों के प्रति घृणा की नीति को बढ़ावा देने के लिए श्रीलंका के नेताओं ने सिंहली राष्ट्रवाद स्थापित करने का भरपूर प्रयास किया, ताकि तमिलों को दबाया जा सके और पड़ोसी भारत से सौदेबाजी की जा सके। इससे श्रीलंका में लंबे समय तक गृहयुद्ध जैसे हालात बने रहे। तमिलों पर अत्याचार के साथ ही श्रीलंका में इस समय अल्पसंख्यक मुसलमान भी संकट में है। इस साल ईस्टर पर श्रीलंका के चर्चों को

आतंकी संगठन आइएस ने सिलसिलेवार बम धमाकों से निशाना बनाया था। इस घटना के बाद मुसलमानों को लेकर सिंहली गुस्से में है। मुसलमानों की दुकानों से सिंहलियों से सामान खरीदना कम या बंद कर दिया है। वहां के धार्मिक बौद्ध समूह ऐसी भावनाओं को भड़का रहे हैं। श्रीलंका का पूरा मुस्लिम समुदाय गहरे तनाव में है और उनके साथ अपमानजनक व्यवहार की घटनाओं मे खासी वृद्धि हुई है।

श्रीलंका में आंतरिक अशांति के बीच चीन ने वहां अपना दबदबा कायम करने की भरपूर कोशिशें की है। उसका यह कदम भारत के प्रभाव को कम करने की नीति का एक भाग है। 2009 में जब श्रीलंका से एलटीटीई का खात्मा हुआ तो चीन पहला देश था जो उसके पुनर्निर्माण के लिए खुल कर सामने आया था। चीन ने 2014 में राजपक्षे को चुनाव में जीत दिलाने की कोशिशें की थीं, लेकिन राजपक्षे हार गए थे। राजपक्षे की हार को भारत की जीत के तौर पर देखा गया था। इस पर न्यूयॉर्क टाइम्स की एक रिपोर्ट में यह खुलासा भी हुआ था कि चाइना हार्बर इंजीनियरिंग कंपनी लिमिटेड (सीएचईसी) ने राजपक्षे को चुनाव जितवाने के लिए 70.6 लाख डॉलर की रकम दी थी। भारत ने 2014 में सिरीसेना की उम्मीदवारी का समर्थन करने की बात कही थी और रानिल विक्रमसिंघे को भारत के दोस्त के तौर पर देखा गया था।

श्रीलंका में चीन के गहरे व्यापारिक हित हैं। चीन और श्रीलंका के बीच दक्षिण समुद्री बंदरगाह हंबनटोटा को लेकर 1.1 अरब डॉलर का समझौता हो गया है। श्रीलंका में चीन की कई परियोजनाएं चल रही हैं और उसने श्रीलंका को एक सौ चालीस करोड़ डॉलर का कर्ज भी दे रखा है। मध्यपूर्व से होने वाले तेल आयात के रूट में श्रीलंका एक अहम पड़ाव है, इसीलिए चीन की यहां निवेश करने में रुचि है। राजपक्षे बंधुओं की चीन के अनुकूल नीति के साथ ही पड़ोसी देश में परंपरावाद का हावी होना इस पूरे उप महाद्वीप के लिए बड़ा संकट बन सकता है। आधुनिक प्रगतिशील युग में कई देशों में धुर दक्षिणपंथी राजनेता अपनी विभाजनकारी नीतियों के बल पर बेहद लोकप्रिय हो रहे हैं और उनके दल सत्ता पर काबिज भी हो रहे हैं। ऐसे में सबसे बड़ा संकट अल्पसंख्यक धार्मिक, नस्लीय और जातीय समूहों के सामने उठ खड़ा हुआ है। बदलते दौर में दक्षिणपंथी ताकतों ने न केवल वैधानिक सत्ता के जरिए व्यवस्था को परिवर्तित कर दिया है, बल्कि वे जातीय और धार्मिक समूहों की पैरोकार भी बन गई हैं। पाकिस्तान जैसे मजहबी देश में अल्पसंख्यकों की सुरक्षा इसीलिए चुनौती बन गई है क्योंकि प्रभावी धार्मिक समूहों के सामने सत्ता कड़े कदम उठाने से बचती रही है। इन्हीं कारणों से कट्टरता आगे बढ़ कर आतंकवाद को बढ़ावा देने लगती है। श्रीलंका भी इसी दिशा में अग्रसर होता जा रहा है।

भारत को पड़ोसी देश श्रीलंका की आंतरिक और बाह्य राजनीति पर प्रभाव बनाए रखने के लिए विशेष कूटनीतिक प्रयासों की जरूरत होगी। इस दौर में भारत को भू अर्थशास्त्र और भू-राजनीति में समन्वय स्थापित करते हुए पड़ोसी देश से सौदेबाजी की शक्ति और क्षमता बढ़ानी होगी। बहरहाल, भारत की आंतरिक और सामरिक सुरक्षा के लिए राजपक्षे की नीतियां चुनौतीपूर्ण रहने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता।

सुनहरे पिंजरे में कैद

अरुणेंद्र नाथ वर्मा

दुनिया मेरे आगे

वर्षों से इसी भ्रम में था कि रामझरोखे बैठ कर जग का मुजरा लेना बहुत सुख कर लगेगा। लगता था जग का मुजरा लेने के लिए फुर्सत ही फुर्सत हो, नून-तेल-लकड़ी की चिंता से मुक्त होकर इतनी ऊंचाई पर बैठना संभव हो, जहां से आकाश में उड़ते पंछी भी अपने से नीचे दिखें और उनके साथ उन्मुक्त उड़ान भरने के लिए मन स्वतंत्र हो तो क्या कहना! फिर तो उस बालगीत में कल्पित अभिलाषा पूरी हो जाएगी जो कहती है- 'चिड़िया मुझे बना दे राम, छोटे पंख लगा दे राम, बागों में मैं जाऊंगा, मीठे फल मैं खाऊंगा, बस इतना-सा कर दे काम!'

लेकिन यथार्थ कल्पना से कितना भिन्न निकला! दो-चार मंजिले मकानों से घिरे हुए नोएडा के अपने घोंसले से निकल कर परिस्थितिवश मुंबई की एक गगनचुंबी अट्टालिका के बहुत ऊंचे माले पर बने एक फ्लैट में कैद हो जाना पड़ा। यहां कुछ समय के लिए बाहर निकलने पर कोई प्रतिबंध नहीं, लेकिन बाहर घूमने पर अंकुश लगाए रही मुंबई की बरसात, जो अक्तूबर में भी जाते-जाते बार-बार लौटती रही। अपने फ्लैट के ऊंचे झरोखे पर बैठे-बैठे सामने दुनिया को गुजरते देख कर उस शायर की याद आती रही जो दुनिया में हर चीज को आनी-जानी पाकर कह बैठा था 'जो आके न जाए वो बुढ़ापा देखा; जो जाके न आए वो जवानी देखी।' मुंबई में सुनहरे पिंजरे में कैद युवावस्था को मुरझाते देखा तो लगा शायद मुझे ही अब तक अन्य शहरों में इतनी फुर्सत से युवाओं के जीवन में झांकने का अवसर नहीं मिला था। शायद सभी महानगरों में जवानी इसी तरह से लगातार भागते-भागते एक दिन अचानक खुद को वापस न जाने वाले बुढ़ापे के शिकंजे में जकड़ा पाकर पछताती होगी कि रसभरी फुहार में भीग कर तृप्त होने के लिए रोज की आपाधापी से फुर्सत के दो चार क्षण क्यों नहीं छीन सकी।

मुंबई में मेरे सामने दो विरोधाभासी चित्र सुबह-सुबह खिंच जाते हैं। देखता हूं आकाश में मंडराते नीले कबूतरों को। चारे की तलाश में यहां से वहां मंडराने वाली कामकाजी उड़ानों के बीच भी वे छज्जों मुंडेरों पर बैठ कर मस्ती से गुटर-गूं गाने के लिए समय निकाल लेते हैं। बालकनियों और झरोखों में उनके अनाधिकार प्रवेश रोकने के लिए बुने गए लोहे के पतले जाल उनकी राह रोकते हैं तो वे छतों पर उतर पड़ते हैं। राख और नील के मिश्रित रंग वाले पंख फुला कर, गर्दन पर बनी गहरे हरे रंग की पट्टी चमकाते हुए, रक्ताभ आंखों से वे अपनी प्रेयसी को देखते हैं। फिर गुटर-गूं की धुन पर उनके नन्हें फिरोजी पंजे थिरकने लगते हैं।

उधर अप्सराओं के नृत्य से होड़ लेते इस खूबसूरत नजारे से बेखबर युवा सुबह-सुबह बैकपैक में लैपटॉप और टिफिन बांध कर निकल पड़ते हैं। सबसे पहले वे, जो छोटे पद और वेतन की मार से दूरस्थ कल्याण और पुणे तक में कम किराए के घरों में रहने को मजबूर हैं। मुंबई के दफ्तरों तक आने-जाने के लिए सुबह-शाम लोकल ट्रेन में दो-तीन घंटे बिताना जिनकी नियति है। उनसे अगली पायदान पर बैठे एमबीए जैसी डिग्रियों से लैस युवा निकटवर्ती सम्भ्रांत उपनगरों में रहने का लाभ उठा कर थोड़ी और देर से अपने घोंसलों से निकलते हैं। देर तक रुकने पर ओवरटाइम नहीं मिलने और सुबह समय से दफ्तर पहुंचने के बावजूद बहुत सारा समय उन मीटिंगों में नष्ट करके, जिसमें घंटों का विवरण 'मिनटों' में समा जाता है, उन्हें पूरी शाम दफ्तर में बितानी पड़ती है। विशेष काम ज्यादा नहीं होने पर भी दफ्तर में देर तक बैठे रहने का एक ही औचित्य होता है कि सबसे बड़ा अफसर बैठा हुआ है। उससे पहले उठ जाने का अर्थ है अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारना! उधर कई बार अफसर इस धोखे में देर तक दफ्तर में बैठा रहता है कि इससे मातहतों की नजर में उसकी इज्जत बढ़ेगी।

कुल मिला कर खरबूजे के चाकू पर गिरने या चाकू के खरबूजे पर गिरने के एक होने की स्थिति बनी रहती है। आखिरकार सब अपने घरों तक देर रात में पहुंचते हैं। अविवाहित कुछ देर टीवी के सामने बैठ लेते हैं। विवाहित दिन भर घर और बाहर के सम्मिलित बोझ से दबी पत्नी और (अगर हों तो) पिता के सान्निध्य को तरसते हुए बच्चे को नींद की गोद में या अधनींदे देख कर सप्ताहांत में उनके लिए समय जरूर निकालने का वादा खुद से करते हैं। और इस तरह थके हारे युवा परिवार का एक दिन और गुजर जाता है।

ऊंचे झरोखे से उनकी दिनचर्या देखते हुए मुझे वर्षा ऋतु में गाए जाने वाले एक करुण गीत में जीवन के अंत का बिंब याद आता है- 'ए री सखी झूला झूलही न पाई, सैयां के आए कहार रे...'! फिर राम-झरोखे बैठ कर मुजरा देखने का मेरा शौक मद्धिम पड़ने लगता है। मन करता है कि अनवरत भागते इन यंत्रवत युवाओं के कान में उसी वर्षागीत की आरंभिक पंक्ति पहुंचा दूं- 'निबुला तले डोला रख दे मुसाफिर, सावन की आई बहार रे..!'

दोहरा मानदंड

आपके अखबार में प्रकाशित मानव संसाधन विकास मंत्री रमेश पोखरियाल निशंक का लेख पढा, जो कि यूनेस्को में दिए गए उनके भाषण का अंश है। इस भाषण में मंत्री महोदय ने जो प्रमुख बातें कही हैं, उनमें से एक प्रमुख बात यह है कि वह अपने देश में निःशुल्क और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा को लेकर प्रतिबद्ध हैं। जबकि हकीकत यह है कि सरकार शिक्षा को लेकर दोहरे मानदंड अपना रही है। एक तरफ तो निःशुल्क शिक्षा की बात की जाती है, वहीं दूसरी तरफ देश के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय- जेएनयू में फीस में भारी बढ़ोत्तरी कर दी गई है। इसी मुद्दे पर पिछले कुछ दिनों से जेएनयू में अशांति का माहौल है। विश्वविद्यालय प्रशासन द्वारा फीस वृद्धि के विरोध में छात्र-छात्राएं धरने पर हैं। उनकी मांगें हैं कि बढ़ी हुई फीस के फैसले को वापस लिया जाए और वाइस चांसलर उनसे लोकतांत्रिक तरीके से बात करें। लेकिन सरकार बात करने के बजाय प्रदर्शनकारी छात्रों के दमन पर उतारू है। पुलिस ने जिस बेरहमी से प्रदर्शनकारी छात्रों को धुना है, वह निंदनीय है।

एक और बात जिसमें मंत्री जी ने जोर देकर कहा है कि विदेशी छात्रों के लिए निःशुल्क शिक्षा। हां यह बात सही है कि हमारे यहां विदेशों से छात्र पढ़ाई करने आते हैं, लेकिन पहले यह जरूरी है कि हम अपने देश को साक्षर बनाएं और भारत में निःशुल्क शिक्षा को बढ़ावा दिया जाए। निःशुल्क के साथ-साथ गुणवत्तापूर्ण शिक्षा बहुत जरूरी है और शिक्षा ऐसी हो जो सतत विकास के लक्ष्यों को हासिल करनें में सक्षम हो।

● *संदीप कुमार, प्रयागराज*

घोटालों पर घोटाले

पंजाब महाराष्ट्र सहकारी (पीएमसी) बैंक में घोटाले के कारण उसके ग्राहकों की मुश्किलें अभी खत्म भी नहीं हुईं कि उत्तर प्रदेश में यूपी पावर कारपोरेशन लिमिटेड में 2268 करोड़ रुपए का पीएफ घोटाला सामने आ गया। अब उत्तर प्रदेश के बिजली विभाग के कर्मचारियों की नींद उड़ी हुई है कि कहीं उनका पैसा न डूब जाए। हम देख रहे हैं कि विजय माल्या, नीरव मोदी जैसे बड़े घोटालेबाज पैसा खाकर भाग निकले, लेकिन अभी तक किसी का कुछ नहीं बिगड़ा। लगता है कि पीएमसी बैंक के घोटालेबाज और यूपी पावर कारपोरेशन में पीएफ घोटाला करने वाले भी ऐसे ही मजे करते रहेंगे।

● *हेमा हरि उपाध्याय, खाचरोद, उज्जैन*

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com

गोटबाया और भारत

श्रीलंका के राष्ट्रपति चुनाव में श्रीलंका फ्रीडम पार्टी की जीत और टर्मिनेटर के नाम से जाने वाले पूर्व रक्षा मंत्री गोटबाया राजपक्षे का राष्ट्रपति बनना भारतीय उपमहाद्वीप के लिए कोई बहुत अच्छा संकेत नहीं माना जा सकता। सब जान रहे हैं कि गोटबाया ने यह चुनाव धार्मिक एवं नस्लीय ध्रुवीकरण के कारण जीता है। पिछले साल अप्रैल में ईस्टर के मौके पर चर्चों में हुए धमाकों के वजह से वहां के अल्पसंख्यक मुसलमानों का बहिष्कार शुरू हो गया। सिंहली समुदाय, न सिर्फ मुसलमानों को बल्कि अन्य दूसरे अल्पसंख्यकों को, जिनमें तमिल भी शामिल हैं, को दुश्मन के नजरिये से देखता है। गोटबाया भले सभी नागरिकों का प्रतिनिधित्व करने का दावा कर रहे हों, पर उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता। चीन का दबदबा और बढ़ने वाला है। उसका कर्ज नहीं चुकाये जाने के एवज में, 2017 में ही, हंबनटोटा बंदरगाह का स्वामित्व चीन को सौंपा जा चुका है। आगे बहुत कुछ चीन के हाथो में जा सकता है जिससे हिंद महासागर में भारत की मुश्किलें बढ़ सकती हैं।

● *जंग बहादुर सिंह, जमशेदपुर*

बेरोजगारों के विरुद्ध

देश में सरकारी नौकरियों में भर्ती के लिए जब कभी भी और कहीं भी विज्ञापन निकलता है तो उसे देख कर बेरोजगार युवा इस उम्मीद से आवेदन और उस परीक्षा की तैयारी करते हैं कि उनका भविष्य इससे सुनहरी बनेगा। लेकिन उनकी उम्मीदों पर उस वक्त पानी फिर जाता है, जब परीक्षा लेने वाले विभाग की लापरवाही कारण कोई गड़बड़ी हो जाती है।

हिमाचल प्रदेश में राजस्व विभाग की तरफ से पटवारी भर्ती के लिए आयोजित परीक्षा, जो 17 नवंबर, 2019 को थी, में विभिन्न खामियों कारण अभ्यार्थियों को भारी परेशानी उठानी पड़ी। कहीं परीक्षा केंद्र का नाम गलत तो, कहीं इस परीक्षा प्रश्नपत्र में पिछली किसी विभाग में भर्ती परीक्षा में शामिल प्रश्न होने की खबरों ने, परीक्षा देने वाले मेहनती और ईमानदार बेरोजगार युवाओं की नींद उड़ा दी। प्रदेश सरकार को बेरोजगारों के साथ हेराफेरी और परेशान करने वाले प्रशासन के अधिकारियों पर कड़ी कार्रवाई करनी चाहिए, न कि इस मामले को भी जांच के हवाले कर अगली किसी प्रवेश परीक्षा में होने वाली गड़बड़ी के इंतजार में लंबी तान के सो जाना चाहिए। मीडिया को भी इस मामले को सुर्खियों में तब तक रखना चाहिए, जब तक सरकार इस पर सख्त कार्रवाई नहीं करती।

● *राजेश कुमार चौहान, जलंधर*

विदेश का झांसा

हरियाणा के लोग अन्य प्रदेशों में तो रोजी रोटी की तलाश में बहुत कम जाते हैं। विदेश जाने में उनकी बहुत रुचि रहती है, ऐसा पिछले दो दशक में देखने में आया है। युवाओं को लगता है कि विदेश में अपने देश के मुकाबले ज्यादा संभावना है। आज स्थिति यह है कि हरियाणवी युवाओं में विदेश जाने की होड़ है। इस कारण वे एजेंटों के हाथों ठगे जा रहे हैं। ज्यादातर एजेंट तो ऐसे नौजवानों को फर्जी दस्तावेजों के आधार पर ही विदेश भेजते हैं। युवाओं को पहुंचना कहीं होता है और पहुंच कहीं और जाते हैं। दस्तावेज फर्जी होने के कारण उन्हें जेल में भी जाना पड़ता है। एक दो नहीं ऐसी सैकड़ों घटनाएं हो चुकी हैं। दरअसल ठगों के खिलाफ एफआइआर काफी देर से कराई जाती है क्योंकि काफी दिनों तक वे पीड़ित को झांसा देकर फंसाए रहते हैं। जब पीड़ीत तो लगता है कि वह ठगा गया, तब कहीं जाकर एफआइआर कराता है। फिर पुलिस भी अपने तरीके से ही काम करती है। कई बार त्वरित कार्रवाई न होने की वजह से पीड़ित थक-हार कर बैठ जाते हैं। यदि ठगों पर तुरंत कार्रवाई हो जाए तो ठगी की तमाम घटनाओं पर रोक लग सकती है। लेकिन इस पर पूरी तरह से अंकुश तभी लग सकता है जब विदेश जाने की आंकाक्षाएं पाले बैठे युवा इनके झांसे में आना बंद कर देंगे।

● *भूपेंद्र सिंह रंगा, पानीपत*